उषा प्रियंवदा के उपन्यासों में चित्रित आधुनिक स्त्री जीवन का यथार्थ

लेखिका- डॉ. मनीषा शंखवार,

हिंदी विभाग, लक्ष्मीबाई कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

ईमेल: manishashankhwar@lb.du.ac.in

हिंदी कथा साहित्य में अनेक स्त्री लेखिकाओं ने अपने साहसपूर्ण मौलिक चिंतन के साथ भारतीय समाज के सभी पहलुओं को यथार्थपरक ढंग से अभिव्यक्त किया है। इनमें उषा प्रियंवदा का नाम बड़े ही आदर के साथ लिया जाता है। उन्होंने हिंदी कथा साहित्य में अनेक साहित्यिक अवधारणाओं की स्थापना में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उषा प्रियंवदा का कथा साहित्य सामाजिक रूढ़ियों, कुप्रथाओं एवं विसंगतियों के प्रति विद्रोह तो है ही साथ ही अपने समय की प्रगतिशील चेतना को भी दिशा देने वाला है। उन्होंने अपने कथा साहित्य में स्त्री जीवन के विविध पहलुओं का अत्यंत सूक्ष्म विश्लेषण किया है। उनके स्त्री पात्र पारंपरिक और आधुनिक जीवन मूल्यों के बीच अपने लिए सम्मानजनक स्थान पाने के लिए प्रयास करते हुए दिखाई देते हैं। उषा प्रियंवदा ने व्यक्ति, परिवार, समाज में स्त्रियों की स्थिति का चित्रण भी अत्यंत सहज और स्वाभाविक तरीके से किया है। डॉ. रामचन्द्र तिवारी ने उषा प्रियंवदा के उपन्यासों के संदर्भ में लिखा है कि- "आपके उपन्यासों में नई कविता दौर की आधुनिकता के सारे तत्व- अकेलापन, संत्रास, ऊब, घुटन, अजनबीपन विद्यमान हैं।" (1)

स्वतंत्रता प्राप्ति के समय तक राष्ट्रीय आंदोलन, नवजागरण और आधुनिक शिक्षा के फलस्वरूप स्त्रियां अपने अधिकारों के प्रति सजग होने लगी थीं। साठ के दशक तक आते-आते साहित्य में कई स्त्रियां सक्रिय हुईं जिन्होंने स्त्री जीवन को प्रमुखता से विषय बनाया। उन्होंने युगों से उपेक्षित स्त्री के अस्तित्व का अन्वेषण कर उसके व्यक्तित्व, विचार और उसकी पीड़ा को अभिव्यक्त करना शुरू किया। यही साहित्य में पुरुष-दृष्टि बनाम स्त्री-दृष्टि का भी विमर्श शुरू हुआ। प्रभा खेतान ने इस विमर्श को मजबूती प्रदान की तो मृदुला गर्ग और निर्मला जैन ने इस विमर्श को अनावश्यक सिद्ध करने की कोशिश की। मृदुला गर्ग ने माना कि स्त्रीवादी लेखन का संबंध लिंग से नहीं बल्कि भावबोध, जीवन-दृष्टि और चेतना से है। लेकिन भावबोध, जीवन-दृष्टि और चेतना के निर्माण में जिन जीवनानुभवों से होता है उनमें लिंग, वर्ण और वर्ग की बड़ी भूमिका होती है। यही कारण है कि स्त्रियों की पीड़ा की जिस निजता की पहचान महादेवी वर्मा कर सकीं, उसे जयशंकर प्रसाद ने 'नारी तुम केवल श्रद्धा हो' की आदर्शवादिता एवं सुमित्रानंदन पंत ने 'संग में पावन गंगा स्नान' की पवित्रता में भी नहीं कर सके। निराला भी अपने वर्गीय दुखों की परिधि पर ही रह गए। महादेवी वर्मा ही अंतरंगता में पहुंच पाईं। महादेवी वर्मा ने लिखा भी है कि: "पुरूष द्वारा नारी का चरित्र अधिक आदर्श बन सकता है, परन्तु अधिक सत्य नहीं। विकृति के अधिक निकट पहुंच सकता है, परन्तु यथार्थ के अधिक समीप नहीं। पुरुष के लिए नारीत्व अनुमान है, परंतु नारी के लिए अनुभव। अत: अपने जीवन का जैसा सजीव चित्र वह हमें दे सकेगी, वैसा पुरुष बहुत साधना के उपरांत शायद ही दे

सके।" (2) यहां कहा जा सकता है कि स्त्री ही स्त्री जीवन के यथार्थ को अधिक सूक्ष्मता से चित्रित कर सकती है। उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य पर भी यह बात लागू होती है।

'रुकोगी नहीं राधिका' उषा प्रियंवदा का अत्यंत महत्त्वपूर्ण उपन्यास है जिसकी उच्च मध्यवर्गीय नायिक राधिका अपने अस्तित्व एवं स्वतंत्रता की खोज में लगातार भटकती है। स्वयं उषा प्रियंवदा ने ही संकेत किया है कि- "राधिका की कहानी यथार्थ जीवन की कथा है जिसमें मुख्य भूमिका निभाने वाली राधिका लेखिका की एक बंधु है। राधिका महसूस करती है कि- "अब मैं स्वतंत्र हूं, परिपक्व भी, और गढ़ सकती हूं अपना जीवन, अपना भविष्य।" (3) वह एक ऐसे व्यक्ति से विवाह करने का निश्चय करती है जो उसे उसके तमाम अवगुणों और अतीत सहित स्वीकार कर ले। यह राधिका के अस्तित्वबोध की तीव्र आकांक्षा का परिचायक है। यह उपन्यास आधुनिक स्त्री की जटिल मानसिकताएं, भटकाव, पीड़ा, द्वंद्व और पीड़ा को अभिव्यक्त करता है। वह व्यक्तिगत स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करती है। वह पूरे उपन्यास में जीवन के कई उतार-चढ़ाव देखती है लेकिन निर्णय स्वयं लेती है। वह किसी भी प्रकार का बंधन स्वीकार नहीं करती। उषा प्रियंवदा ने राधिका के इलेक्ट्रा कॉम्प्लेक्स के बारे में बताया है। राधिका के जीवन में आने वाली तमाम हलचलों और परिवर्तनों का मूल कारण उसका अपने पिता से अतिरिक्त लगाव है। उपन्यास का एक पात्र डैन इस ओर संकेत करता है। वह राधिका से कहता है कि "पिता के प्रति तुम्हारा लगाव बहुत कुछ एब्नॉर्मल है। यदि भारतीय परिवेश में तुम्हें प्रारंभ से ही युवा मित्र बनाने की सुविधा होती तो ऐसा न होता।" (4)

उषा प्रियंवदा ने अपने उपन्यास 'पचपन ख़म्भे लाल दीवारें' में मध्यवर्गीय परिवार, उनकी आर्थिक परेशानियों और उसमें एक स्त्री के जीवन का यथार्थ चित्रण किया है। अब तक घर की चहारदीवारी में कैद स्त्री बाहर निकलती है। वह अपने परिवार की जिम्मेदारी संभालती है। इसके बावजूद एक स्त्री को पुरुषवादी समाज में अपनी स्वतंत्रता एवं समानता के लिए संघर्ष करना पड़ता है। इस उपन्यास की नायिका सुषमा ऐसी ही शिक्षित और आत्मनिर्भर स्त्री है। वह मध्यवर्गीय परिवेश में स्वतंत्रता के लिए छटपटाती है। वह अपने परिवार की जिम्मेदारियों के कारण अपनी आकांक्षाओं का दमन कर देती है। सुषमा के जीवन में परिवर्तन की शुरुआत नील के आने से होती है। वह नील को पाना चाहती है लेकिन समाज उसकी चाहत के विरोध में खड़ा हो जाता है। उस पर सामाजिकता हावी हो जाती है। उसे सभी लोग यही समझाते हैं कि तुम एक समझदार लड़की हो और तुम्हें इस तरह की भावुकता शोभा नहीं देती। पद की गरिमा, उत्तरदायित्व की विवशता, भली और समझदार लड़की बने रहने का मानसिक दबाव उससे स्त्री होने का सहज अधिकार छीन लेता है। वह अपने में ही कैद हो जाती है। वह अपने कॉलेज के पचपन खम्भों और लाल दीवारों के बीच जीवन जीने के लिए अभिशप्त हो जाती है। वह समाज में स्त्री की दयनीय स्थिति के बारे में सोचती तो है लेकिन उससे खुद को नहीं निकाल पाती। सुषमा का अकेलापन और लाचारी हम अन्दर तक महसूस करते हैं। यह समझ ही नहीं पाते हैं कि सुषमा को कौन सा रास्ता अपनाना चाहिए। सुषमा के अंतिम निर्णय को जानने की जिज्ञासा उपन्यास के अंत तक बनी रहती है।

'शेष यात्रा' उपन्यास की नायिका अनु एक परम्पराबद्ध भारतीय स्त्री है। वह अन्य आदर्श भारतीय स्त्रियों की तरह अपने पति प्रणव पर पूरा भरोसा करती है। वह अपने पति पर पूर्णतया आश्रित है और उसकी हर बात को मानती है इसके विपरीत प्रणव खल प्रवृत्ति का व्यक्ति है। एक दिन प्रणव एक अन्य स्त्री चंद्रिका की ओर आकर्षित हो जाता है। इस घटना से अनु को सदमा लगता है। वह मानसिक विघटन के कगार पर पहुंच जाती है। उषा प्रियंवदा लिखती हैं- "चंद्रिका में, उसकी प्रखरता में एक ऐसा अदमनीय

आकर्षण था, उसके साथ में एक ऐसी गहरी गहरी अभूतपूर्व परितुष्टि थी कि उसके बाद प्रणव को अनु के साथ वैवाहिक जिंदगी बहुत लाचार और बेमानी लगने लगी थी।" (5) इसके बाद प्रणव तलाक लेना चाहता है। वह तलाक के लिए अदालत में अनु पर झूठे आरोप लगाता है। अनु हीनताबोध और गहरी आत्मव्यर्थता से उबरने के लिए पढ़ाई शुरू करती है और एक दिन डॉक्टर बन जाती है। वह दीपांकर से प्रेम करने लगती है। दीपांकर के साथ अनु का संबंध बराबरी का था। अनु दीपांकर को अपना जीवन-साथी के रूप में इसलिए चुनती है क्योंकि "दीपांकर उसे हर तरह से सूखी रखने की कोशिश करेगा, वह जानती थी। वह अपने लिए महत्वाकांक्षी नहीं था पर अनु को वह कभी कोई भी निर्णय लेने से नहीं रोकेगा। यह होगी बराबरी की साझेदारी, न कोई बड़ा, न छोटा, न सुपीरियर, न इन्फ़ीरियर।" (6) उषा प्रियंवदा अनु और दीपांकर के संबंधों के आधार पर यह बताना चाहती हैं कि स्त्री और पुरूष के संबंध समानता पर आधारित होना चाहिए। हमारी पुरानी सामाजिक मान्यताओं ने स्त्री को चूल्हा-चौका तक सीमित कर दिया था लेकिन अब स्त्रियों के जीवन की परिधि केवल घरेलू कार्य नहीं हैं। आज स्त्री घर से बाहर निकलकर परिवार की आर्थिक जिम्मेदारियों का भी निर्वाह कर रही हैं। आलोक और नीरजा का संबंध इसी प्रकार का है। आलोक घर पर रहकर परिवार और बच्चों की जिम्मेदारी संभालता है तथा नीरजा नौकरी करती है। आलोक को इसके लिए शर्म नहीं आती है उसके लिए पति और पत्नी का रिश्ता एक पार्टनरशिप है। वह कहता है- "हर इंटेलिजेंट इंसान कोई भी काम कर सकता है। फिर हमारी तो पार्टनरशिप है। नीरजा ने बच्चे को जन्म दिया, उसे पालने की ज्यादा जिम्मेदारी मेरी होनी चाहिए न?" (7)

उषा प्रियंवदा ने अपने उपन्यासों में काम संबंधों का स्वच्छंद चित्रण किया है। काम-भावना मनुष्य की एक स्वाभाविक आवश्यकता है किंतु सभ्यता के विकास-क्रम में काम-भावना को अनुशासित एवं नियमबद्ध बना दिया गया। इस कारण हमारे समाज ने स्वच्छंद काम-भावना पर पाबंदी लगाई है और इसे स्त्री की शुचिता, पवित्रता आदि से जोड़ दिया गया। स्त्री लेखिकाओं में कई स्त्रियां ऐसी हैं जिन्होंने अपने साहित्य में स्वच्छंद काम-भावना का चित्रण किया है। अब यौन संबंधों को असामान्य न मानकर सहज माना जा रहा है। आज की शिक्षित स्त्रियां पाप और पुण्य की मान्यताओं से स्वयं को अलग कर रही हैं। वे पुरुषों के साथ अपने संबंधों को नए अर्थ दे रही हैं। उषा प्रियंवदा के उपन्यासों में ऐसी कई स्त्रियां चित्रित हुई हैं जो विवाह के बिना भी अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाए रखने के लिए सजग हैं। उषा प्रियंवदा ने काम-भावना को स्त्रियों के लिए भी उतना ही सहज माना है जितना पुरुषों के लिए अब तक माना जाता रहा है। 'पचपन ख़म्भे लाल दीवारें' उपन्यास की सुषमा अपने से पांच वर्ष छोटे नील के साथ यौन-संबंध बनाती है। उषा प्रियंवदा ने इस स्थिति का चित्रण इस तरह से किया है कि यह विकृति नहीं बल्कि स्वाभाविक लगता है। सुषमा अपने अंदर की स्त्री की नैसर्गिक इच्छाओं को खुलकर खेलने का मौका देती है। उषा प्रियंवदा लिखती हैं- "भविष्य उनके आगे दूर तक फैला था और विगत की सारी अपूर्णता और भटकन इस क्षण में सिमट आई थी। जहां शब्द अनावश्यक और निरर्थक बन गए थे और सांसें एक-दूसरे को बांधती जा रही थी। उनकी छूती हुई उंगलियों में सारे शरीर की चेतना और संवेदना एकत्र हो गयी थी।" (8) नील के साथ बिताए ये पल ही सुषमा के जीवन के अमूल्य धरोहर बन जाते हैं। हालांकि सुषमा सामाजिक मान्यताओं के बोझ तले दब जाती है और नील के साथ अपने संबंधों को आगे नहीं बढ़ा पाती है।

'रुकोगी नहीं राधिका' की राधिका अपने पिता से बदला लेने के लिए स्वच्छंद आचरण करने लगती है। वह विदेशी युवक डैन के साथ यौन-संबंध बनाती है। वह डैन के बाद मनीष को चाहने लगती है। वह मनीष के बाद अक्षय के साथ भी यौन संबंध बनाती है। किसी एक पुरूष के साथ लंबे समय तक वह रह नहीं पाती। वह यौन-संबंध के बारे में खुलकर बात करती है। राधिका से जब अक्षय

पूछता है तो वह कहती है- "विगत को सोचने से क्या? तब जो मैं थी, अब वह नहीं हूं। हर समय जो बीतता है, जीती हूं। उसके बाद पहली सी कहाँ रह जाती हूं। कल भी तुम्हारे जाने के बाद...।" (9) राधिका एक आधुनिक स्त्री की प्रतिनिधि पात्र है जिसके लिए काम संबंधी मान्यताएं परिवर्तित हो गई हैं। वह काम संबंधों के मामले में स्त्रियों की स्वतंत्रता की पक्षधर है। हमारे समाज ने स्त्री और पुरुष के लिए अलग-अलग नैतिक मूल्यों का निर्माण किया है। पुरुषसत्तात्मक समाज में चूंकि समाज का नियामक पुरुष ही होता है इसलिए उसने पवित्रता के सारे पैमाने स्त्रियों पर थोप दिए हैं। स्त्रियों के कौमार्य-भंग को उनकी पवित्रता और सम्मान से जोड़ दिया है। उषा प्रियंवदा के उपन्यास 'शेष यात्रा' का प्रणव पुरुष वर्ग का प्रतिनिधि पात्र है। वह कई स्त्रियों से यौन-संबंध बनाता है। जब वह अपनी पत्नी अनु को इन काम-संबंधों में बाधा के रूप में पाता है तो तलाक लेने में देर नहीं करता है। तलाक लेने के बाद जब अनु खुद को संभालती है तो वह दीपांकर से प्रेम करने लगती है। वह दीपांकर के साथ विवाह से पूर्व ही यौन संबंध बनाती है। उषा प्रियंवदा की नायिकाएं पारंपरिक न होकर आधुनिक हैं। वे पुरुष के उपभोग की वस्तु नहीं बनना चाहती हैं। उनकी नायिकाएं काम-संबंधों के दौरान पुरुष के सम्मुख समर्पित नहीं होती हैं बल्कि बराबरी का व्यवहार करती हैं। इतना ही नहीं उनकी नायिकाएं आगे बढ़कर पुरुष को काम-संबंधों के लिए आकर्षित भी करती हैं। 'भया कबीर उदास' की नायिका लिली शेषेन्द्र को यौन-संबंध के लिए आमंत्रित करते हुए कहती है- "पहले भी आकर्षक पुरुष मिले हैं, परन्तु किसी को यों आगे बढ़कर नहीं आमंत्रित किया है अपनी शय्या पर।" (10)

उषा प्रियंवदा स्त्री सशक्तिकरण के लिए स्त्रियों के आत्मनिर्भर होने को आवश्यक शर्त मानती हैं इसलिए उनके स्त्री पात्र अपने कैरियर को लेकर सचेत दिखाई देती हैं। उषा प्रियंवदा के स्त्री पात्र न केवल आत्मनिर्भर बनती हैं बल्कि वे घर और परिवार की जिम्मेदारी भी उठा लेती हैं। उनकी नायिकाएं यथा सुषमा, राधिका, अनु, वाना और लिली अपने कैरियर के प्रति सजग हैं। 'पचपन ख़म्भे लाल दीवारें' की सुषमा स्वयं को परिवार की जिम्मेदारियों के लिए समर्पित कर देती है। वह मीनाक्षी से कहती है- "मैं नहीं चाहती कि जो कुछ मैंने देखा और सहा, वही मेरे भाई-बहनों के सामने आए। मैं तो मन मसोसकर, रोकर रह जाती थी।" (11) जब नील के कारण उसकी नौकरी पर आंच आती है तो वह नील को भी छोड़ देती है। वह अपने कैरियर और पारिवारिक जिम्मेदारियों को प्राथमिकता देती है। 'रुकोगी नहीं राधिका' की राधिका भी अपने कैरियर के प्रति सचेत है। यहां हम यह भी देखते हैं कि सुषमा और राधिका के बीच कैरियर की सजगता में अंतर है। सुषमा जहां कमजोर आर्थिक स्थिति के कारण कैरियर के प्रति सजग है तो राधिका मानसिक संतुष्टि के लिए। राधिका अमेरिका से इतना अधिक धन कमाकर लाती है कि उससे उसका साल भर काम चल सकता है। 'शेष यात्रा' की अनु भी तलाक के बाद डॉक्टर बनती है। सारिका वाना से कहती है कि- "रसोई के आगे भी एक अनंत संसार फैला हुआ है।" (12) 'भया कबीर उदास' की लिली भी विदेश में प्राचीन इतिहास और सभ्यता पढ़ाने का कार्य करती है। इस प्रकार उषा प्रियंवदा की स्त्रियां परंपरागत स्त्री जीवन को छोड़कर आधुनिक जीवन को अपनाती हैं।

संदर्भ सूची:

1. डॉ. रामचन्द्र तिवारी, हिंदी उपन्यास, पृष्ठ 178
2. महादेवी वर्मा, श्रृंखला की कड़ियां, पृष्ठ 74
3. उषा प्रियंवदा, रुकोगी नहीं राधिका, पृष्ठ 103
4. वही, पृष्ठ 69

5. उषा प्रियंवदा, शेष यात्रा, पृष्ठ 89
6. वही, पृष्ठ 128
7. वही, पृष्ठ 36
8. उषा प्रियंवदा, पचपन ख़म्भे लाल दीवारें, पृष्ठ 86
9. उषा प्रियंवदा, रुकोगी नहीं राधिका, पृष्ठ 99
10. उषा प्रियंवदा, भया कबीर उदास, पृष्ठ 55
11. उषा प्रियंवदा, पचपन ख़म्भे लाल दीवारें, पृष्ठ 100
12. उषा प्रियंवदा, अन्तरवंषी, पृष्ठ 68